अध्याय-4

ज्ञानकर्मसंन्यासयोग-नामक चौथा अ0।।

[1-18 सगुण भगवान का प्रभाव और कर्मयोग का विषय]

श्रीभगवानुवाच-इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवान् अहं अव्ययं। विवस्वान् मनवे प्राह मनुः इक्ष्वाकवे अब्रवीत्।। 4/1

अहं इमं अव्ययं योगं	{निराकार सदाशिव ज्योति स्वरूप} मैंने यह अविनाशी {ऊर्जा रूप} योग {कल्पपूर्व भी}
विवस्वते प्रोक्तवान्	{जर्जरीभूत बुद्धि} विवस्वत/{चेतन ध्रुवतारा/हीरो} को {पु. संगम में प्रविष्ट होकर} कहा था,
विवस्वान् मनवे प्राह	विवस्वत ने {वृषभ रूप बैलबुद्धि} मनुआ {संगठित चतुर्मुखी/सूक्ष्मशरीरी ब्रह्मा} को कहा,
मनुः इक्ष्वाकवे अब्रवीत्	मनु ने {कामेच्छाधारी पुत्र} इक्ष्वाकु को कहा। {जिसने तक्षकदंश से अकालमृत्यु पाई।}

एवं परम्पराप्राप्तं इमं राजर्षयो विदुः। स कालेन इह महता योगो नष्टः परन्तप।। 4/2

एवं परम्पराप्राप्तं इमं	इस प्रकार परम्परा से प्राप्त इस {प्राचीन योग} को {विक्रमादित्यादि दाढ़ी मूंछ वाले विकारी}
राजर्षयः विदुः परंतप स योगः महता	राजर्षियों ने {द्वापर में} जाना। हे शत्रुतापक! वह योग लम्बे {2500 वर्षीय
कालेन इह नष्टः	विदेशी विधर्मी & हिंसक दैत्यों के द्वापरयुगी} काल से {ही} यहाँ {पापी कलियुग में पूरा} नष्ट हो गया।

{पहले संगमी शूटिंग में ब्रह्मर्षियों ने, फिर देवर्षियों ने और अंत में द्वैतवादी द्वापुर से विक्रमादित्य-जैसे राजर्षियों ने जाना है। अभी राजयोगी सदास्वाधीन राजाओं का राज्य है या सदापराधीन प्रजातंत्र राज्य है? (पराधीन भिखमंगों का)}

स एवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः। भक्तः असि मे सखा च इति रहस्यं हि एतत् उत्तमं।। 4/3

मे भक्तः च सखासि इति स एव	{कलियुगान्त में तू} मेरा भक्त और सखा है, इस कारण से {हर चतुर्युगी के अंत में} वो ही

अयं पुरातनः योगः मया अद्य ते	यह {परम प्रसिद्ध} प्राचीन {कल्पपूर्व का} योग मैंने आज {मुकर्रर रथधारी} तुझको
प्रोक्तः एतत् हि उत्तमं रहस्यं	{पु. संगम में} कहा है। यह {निश्चय} ही श्रेष्ठतम {त्रिकालदर्शिता का} रहस्य है।

अर्जुन उवाच-अपरं भवतो जन्म परं जन्म विवस्वतः। कथं एतत् विजानीयां त्वं आदौ प्रोक्तवान् इति।। 4/4

विवस्वतः जन्म परं भवतः	{त्रिनेत्री ज्ञानसूर्य} विवस्वत का जन्म परंपूर्वकाल {कल्प के आदि} में {और} आपका
जन्म अपरं त्वं आदौ	जन्म {कलियुगांत} बाद में {अब} है, {तो} आपने '{चतुर्युगी के} आदिकाल में हुआ',
एतत् प्रोक्तवान् इति कथं विजानीयां	ऐसे कहा- यह कैसे मानूँ? {यह तो दो विपरीत बातें हो गईं।}

श्रीभगवानुवाच-बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन। तानि अहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप।। 4/5

अर्जुन मे च तव	हे अर्जुन! {प्रवेश योग्य दिव्यजन्मा सदाशिव ज्योतिरूप} मेरे और तेरे {5000• वर्षीय चतुर्युगी के}
बहूनि जन्मानि व्यतीतानि	असंख्य {चतुर्युगी में असंख्य} जन्म बीते हैं। {कलियुगांत में 'यदा-2 हि धर्मस्य' (4/7),
तानि सर्वाणि	& रामायण में "कल्प-2 लगि प्रभु• अवतारा"}-उन सब {कल्पों के कलियुगान्त में हुए जन्मों} को
अहं वेद	{चतुर्युगी =1कल्प की हूबहू पुनरावृत्ति से} मैं {त्रिकालज्ञ शिव अजन्मा और अगर्भा होने कारण} जानता हूँ,
परंतप	{पुरुषोत्तम संगमयुग में खास हे कामादिक} शत्रु-तापक/{कामारि महान देवात्मा! अभी अंतिम तामसी जन्म में खास
त्वं न वेत्थ	इन्द्रिय सुख भोगी आत्मा} तू नहीं जानता। {जन्मांतरण में इन्द्रिय सुख भोगते-2 पूर्वजन्म की बातों को भूल जाता है।}

•{हर 5000 वर्ष की चतुर्युगी का ड्रामा हूबहू रिपीट होता है; क्योंकि हरेक स्टार-जैसी आत्मा रूपी रिकॉर्ड में अपना-2 अनादि निश्चित जन्मों का पार्ट भरा हुआ है जो 'कल्प' नाम की चतुर्युगी में बारंबार हूबहू रिपीट होता है। चार सीन का बेहद अविनाशी ड्रामा है}

अजः अपि सन् अव्ययात्मा भूतानां ईश्वरः अपि सन्। प्रकृतिं स्वां अधिष्ठाय सम्भवामि आत्ममायया।। 4/6

अव्ययात्मा	{अजन्मा,अगर्भा-अभोक्ता-अकर्ता होने कारण देह में सदा अनासक्त,} कभी क्षरित न होने वाला {अमोघवीर्य},
अजः सन् अपि	{प्रवेश होने योग्य और गर्भ से} अजन्मा होते हुए भी {आत्मिक प्यार से भरपूर मैं निराकार बिन्दुरूप शिवज्योति
भूतानां ईश्वरः सन् अपि	देहभाव से सदाशून्य} प्राणियों का {श्रेष्ठतम और अहिंसक} शासनकर्ता होते भी,
स्वां प्रकृतिं अधिष्ठाय	अपने {अर्जुन/आदम के मुकर्रर रथ रूपी दैहिक इन्द्रियों की} प्रकृति को आधीन करके,
आत्ममायया सम्भवामि	{प्रबलतम} आत्मशक्ति से {गीता-11/54 में 'प्रवेष्टुम्' अनुसार ही} जन्म लेता हूँ।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिः भवति भारत। अभ्युत्थानं अधर्मस्य तदा आत्मानं सृजामि अहं।। 4/7

भारत यदा-2 धर्मस्य	हे भरतवंशी! जब-2 {तामसी कलियुगांत• होते-2 सनातन सद्} धर्म की {&धर्मपिता की घोर}
ग्लानिः अधर्मस्य अभ्युत्थानं	•ग्लानि {और मन-वचन-कर्म से हिंसक स्लाम-क्रिश्चियनादि} अधर्म{या विधर्म} की वृद्धि
भवति तदा हि	{या नास्तिकता} होती है, तब ही {गी.18-66 में 'सर्वधर्मान् परित्यज्य'अनुसार सब विधर्मियों-
अहं आत्मानं सृजामि	अधर्मियों का} मैं स्वयं {शिव, तामसी बने अर्जुन/आदम हीरो पात्र में प्रत्यक्षता रूपी दिव्य} जन्म लेता हूँ।

•{जैन धर्म के अंतिम आरे में और वैदिक सृष्टि प्रक्रिया के अनुसार, पापी कलियुग-अंत में ही सद् धर्म और धर्मपिता आदिदेव/आदम की सम्पूर्ण •ग्लानि होती है।} {दिखिए आदीश्वर चरित्र पृ.110 & 111 (फुटनोट), U TUBE 'AIVV' में भी दे.}

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृतां। धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।। 4/8

साधूनां परित्राणाय दुष्कृतां	{मैं} सन्तों की रक्षा के लिए, {ज्ञान और कर्म-इन्द्रियों से हिंसारत} दुराचारियों के
विनाशाय च धर्मसंस्थापनार्थाय	विनाश के लिए और {यहाँ ही 100% वैष्णवी सत्} धर्म की संपूर्ण स्थापना अर्थ

युगे-युगे सम्भवामि	{कलियुगांत+सतयुगादि के} दो युगों के बीच {पुरुषोत्तम संगमयुग में दिव्य प्रवेशनीय} जन्म लेता हूँ।

नोटः- {गीता के इन 4-7,8 और 18-66 के अनुसार सभी धर्मों की उपस्थिति और ग्लानि भी पापी कलियुग के अंत में ही हो रही है & सारे विश्व में 9 कुरी के मानसी ब्रह्मापुत्र भी प्रैक्टिकल AIVV में बन रहे हैं। जैसे नं. वार युगानुकूल सभी धर्मपिताओं ने सुनाया, ऐसे ही शिवबाबा को मौखिक गीता-ज्ञान श्रावणार्थ 100 वर्ष तो पंचानन ब्रह्मा द्वारा चाहिए ना! ये बेहद का रूहानी बाप तो सद्धर्म के साथ राजधानी भी बनाते हैं।}

जन्म कर्म च मे दिव्यं एवं यो वेत्ति तत्त्वतः। त्यक्त्वा देहं पुनः जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन।। 4/9

अर्जुन एवं मे दिव्यं	हे अर्जुन! इस प्रकार मेरे दिव्य {प्रवेशनीय• मानवीय रथ/कपिध्वज अर्जुन को, और इस मुकर्रर रथ के}
जन्म च कर्म यः	जन्म और कर्मों को, जो {कलियुगी तामसी बुद्धि अर्जुन-रथ वाले, गीतावर्णित 13-5 के इन्द्रियादि 23}
तत्त्वतः वेत्ति सः देहं	{जड़जड़ीभूत} तत्त्वों सहित {गीताज्ञान के सार 13-2,3 के क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ को} जानता है, वह देह {रूप देहभान} को
त्यक्त्वा मां एति	त्यागकर मुझ {सद्गतिदाता सदाशिव ज्योति सुप्रीम बाप, टीचर, सद्गुरु} को पाता है {और}
पुनः जन्म न एति	फिर से {इस नारकीय दुःखधाम में} जन्म नहीं लेता; {विष्णुलोकीय स्वर्गीय संसार में ही जाता है।}

•{परकाय प्रवेश के प्रमाणों के लिए 'आदीश्वर रहस्य' में भी देखिए 'शिव का दिव्यजन्म', वृद्ध ब्रह्मा, 'सिंधुरथ', 'परकाया-प्रवेश'आदि। प्रकरण-5, पृष्ठ 131 से 152} {U TUBE 'ADHYATMIK VIDYALAYA'}।

वीतरागभयक्रोधा मन्मया मां उपाश्रिताः। बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावं आगताः।। 4/10

वीतरागभयक्रोधा मन्मया मां	{पहले भी हर कल्प में} राग-भय-क्रोधरहित मेरे {'अव्यक्त मूर्त' 9-4} में ध्यानमग्न {एवं} मेरे
उपाश्रिताः बहवो ज्ञानतपसा	पूरे ही आश्रित बहुत {लाखों} लोगों ने ज्ञान-योग {रूपी} तपस्या से {मेरी आत्मस्मृति द्वारा}
पूता मद्भावं आगताः	पवित्र बन मेरे {विष्णुलोकीय राजाई} भाव को {नं. वार पुरुषार्थ अनुसार} पाया है।

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तान् तथैव भजामि अहं। मम वर्त्म अनुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः।। 4/11

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तान् तथैव	जो जैसे {संबंधों से} मुझको समर्पित होते हैं, उनको उसी {नज़दीकी सम्बन्ध से}
अहं भजामि पार्थ मनुष्याः	मैं अपनाता हूँ। हे पृथ्वीपति! {अच्छे} लोग {मेरी डाली गई श्रेष्ठतम परम्परानुसार}
सर्वशः मम वर्त्मानुवर्तन्ते	सब रीति मेरे मार्ग का अनुकरण करते हैं। {गाते भी हैं 'महाजनेन येन गतः स पन्थाः।'}

काङ्क्षन्तः कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः। क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिः भवति कर्मजा।। 4/12

इह कर्मणां सिद्धिं कांक्षन्तः	इस {असम्भव को संभवकर्ता पु.संगमयुगी} लोक में कर्मों की सफलता के इच्छुक
देवताः यजन्त हि मानुषे लोके	देव-यज्ञसेवा करते हैं; क्योंकि {यहीं साक्षात् मननशील मनु के पुत्ररूप} मनुष्यलोक में
कर्मजा सिद्धिः क्षिप्रं भवति	कर्म से उत्पन्न सफलता शीघ्र होती है, {देवलोक या नरकलोक/पृथ्वीलोक में नहीं।}

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः। तस्य कर्तारं अपि मां विद्धि अकर्तारं अव्ययं।। 4/13

मया गुणकर्मविभागशः	{कल्प/चतुर्युगी पहले भी हर व्यक्ति के भावानुकूल} मैंने {पु.संगम में हुए} गुण-कर्म के विभागानुसार
चातुर्वर्ण्यं सृष्टं तस्य	{नं.वार} चार वर्णों को रचा था। उसका {मेरी श्रीमत से मेरे समान बने ज्योतिर्लिंग-रूप}
कर्तारं अपि अकर्तारं	{अव्यक्तमूर्ति के} कर्ता होने पर भी {सदा शिवज्योति} अकर्ता, {अभोक्ता,अगर्भजन्मा,अनासक्त}
मां अव्ययं विद्धि	{एवं निर्विकारी} मुझ अक्षर {अमोघवीर्य} को {•मूर्तिमान भोगी आत्मा महादेव शंकर} समझ लेते हैं।

•{निराकार शिवज्योति सदा परमधामवासी है; आदिदेव/आदम/एडम/काशी-कैलाशीवासी साकारी दुनियाँ का वासी है।}

न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा। इति मां यः अभिजानाति कर्मभिः न स बध्यते।। 4/14

न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले	न मुझको {अच्छे-बुरे} कर्मों का बंधन है, न मुझे कर्मों के फल में {कोई प्रकार की}

स्पृहा इति यः मां अभिजानाति	इच्छा है। ऐसे जो {भली-भाँति मंथन करके} मुझ {सदाकाल निर्लिप्त रूप} को जान लेता है,
स कर्मभिः न बध्यते	वह {स्वर्ग + वैकुण्ठ के 21 जन्म=सत-त्रेतायुगी/आधाकल्प} कर्मों में नहीं बँधता। {वहाँ सुखी ही रहता है।}

एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म पूर्वैः अपि मुमुक्षुभिः। कुरु कर्म एव तस्मात् त्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतं।। 4/15

एवं ज्ञात्वा पूर्वैः मुमुक्षुभिरपि	ऐसा जानकर पूर्व {कल्प-कल्पान्तर} के {पु. संगमयुगी} मुक्ति-अभिलाषियों ने भी {हूबहू
कर्म कृतं तस्मात्त्वं	ऐसा ही} कर्म किया था, इसलिए {हर कल्प के ज्यों के त्यों/हूबहू पुनरावृत्ति नियम से} तू
पूर्वैः पूर्वतरं कृतं कर्मैव कुरु	पूर्व से पूर्वतर {हर चतुर्युगी में} किए हुए कर्मों को {मुकर्रर रथ में मुझे पहचानकर} ही कर।

किं कर्म किं अकर्म इति कवयः अपि अत्र मोहिताः। तत् ते कर्म प्रवक्ष्यामि यत् ज्ञात्वा मोक्ष्यसे अशुभात्।। 4/16

किं कर्म किं अकर्म इति	क्या कर्म है, {क्या विकर्म है और} क्या अकर्म है- ऐसे {कर्मथ्योरी के बारे में 2500 के इतिहास में}
अत्र कवयः अपि मोहिताः	यहाँ {बड़े-2 न्यायाधीश ऋषि-मुनि आदि} विद्वान लोग भी चकरा गए हैं। {ऐसे पत्थरबुद्धि बन पड़े}
ते तत् कर्म प्रवक्ष्यामि यत्	तुझे वह कर्म- {अकर्म-विकर्म का स्वरूप} बताता हूँ, जिसे {सच्ची गीता संविधानानुसार}
ज्ञात्वा अशुभात् मोक्ष्यसे	जानकर {2500 वर्षीय सत-त्रेता के आधाकल्प के लिए} अशुभ {कर्मों} से मुक्त हो जाएगा।

कर्मणो हि अपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः। अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः।। 4/17

कर्मणो बोद्धव्यं च विकर्मणः अपि	कर्म को जानना चाहिए और विपरीत कर्म {अर्थात् श्रीमत-विरुद्ध विकर्म को} भी
बोद्धव्यं च अकर्मणः बोद्धव्यं	जानना चाहिए और {आत्मबिंदु की स्मृति में रह} अकर्म {भी} जानने योग्य है;
हि कर्मणः गतिः गहना	क्योंकि कर्म-गति {अति} गहन है। {जो केवल मैं सदाशिव ज्योति पु. संगमयुग में ही आकर बताता हूँ।}

कर्मणि अकर्म यः पश्येत् अकर्मणि च कर्म यः। स बुद्धिमान् मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत्।। 4/18

यः कर्मणि अकर्म	जो {व्यक्ति आत्मस्मृति से} कर्म में •अकर्म को {निस्संकल्प यानी बिन्दुरूप बनकर निराकारी होते हुए}
पश्येत् च यः अकर्मणि	देखता है और जो कर्मत्याग में {भी सदाकाल संकल्प-शून्य रहते हुए 'न किंचिदपि चिंतयेत'(गी.6-25) ऐसी}
कर्म स मनुष्येषु बुद्धिमान्	{मनसा से} कर्म देखता है, वह मनुष्यों में {अवश्य ही} समझदार {प्रजापिता ब्रह्मापुत्र} है।
स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत्	{और} वह योगी सम्पूर्ण {'सर्वसंकल्पसंन्यासी' गीता, 6-4 जैसा} कर्म करने वाला है।

•बाप (तुम बेहद के संन्यासियों को) कर्म-विकर्म-अकर्म की गति समझाते हैं। (मुरली ता.2.7.68 पृ.2 मध्य)

[19-23 योगी महात्मा पुरुषों के आचरण और उनकी महिमा]

यस्य सर्वे समारम्भाः कामसङ्कल्पवर्जिताः। ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तं आहुः पण्डितं बुधाः।। 4/19

यस्य सर्वे समारम्भाः कामसंकल्प-	जिस {व्यक्ति} के {लौकिक-अलौकिक} सब कार्य {हिंसायुक्त} कामविकार के संकल्प
वर्जिताः तं बुधाः ज्ञानाग्नि-	से रहित हैं, उसको बुद्धिमान् लोग ज्ञानाग्नि से, {द्वैतवादी द्वापुर से हुए अनेक (63) जन्मों के अपने}
दग्धकर्माणं पंडितं आहुः	{पाप-} कर्म जलाने वाला {पु. संगमयुगी} पंडित कहते हैं। {बाकी सभी साधारण हो गए}

त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः। कर्मणि अभिप्रवृत्तः अपि नैव किञ्चित् करोति सः।। 4/20

निराश्रयः कर्मफलासंगं त्यक्त्वा	{शिवबाबा सिवा किसी के} आश्रयहीन, कर्मफल की आसक्ति त्यागकर {'नैष्कर्म्यसिद्धिम्' (गी.18-49) से}
नित्यतृप्तः सः कर्मणि अभिप्रवृत्तः	सदा संतुष्ट हुआ वह {सहज योगी सांसारिक} कर्म में अच्छी तरह लगा रहने पर
अपि किंचित् एव न करोति	भी कुछ भी नहीं करता। {सदा शिवज्योति समान जैसा निराकारी,अभोक्ता,अकर्ता रहता है।}

निराशीः यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः। शारीरं केवलं कर्म कुर्वन् न आप्नोति किल्बिषं।। 4/21

निराशीः यतचित्तात्मा	{सांसारिक} आशारहित, अपने {मन-बुद्धि रूप} चित्त का वशकर्ता, {एकाग्र भावेन तन-धन-धाम से}
त्यक्तसर्वपरिग्रहः	सब प्रकार के स्वामित्व का त्यागी, {मुझ अभोक्ता शिवज्योति समान सदा निराकारी आत्मलोकवासी बन}
केवलं शारीरं कर्म	{सांसारिक इच्छामात्रमविद्या होकर} केवल {विष्णु लोकीय पुरुषार्थ निर्वहणार्थ अनिवार्य} शारीरिक कर्म
कुर्वन् किल्बिषं न आप्नोति	करता हुआ पाप को नहीं पाता; {पतित देह & दुनियाँ में भी सदा निष्पाप बना रहता है।}

यदृच्छालाभसन्तुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः। समः सिद्धौ असिद्धौ च कृत्वा अपि न निबध्यते।।4/22

यदृच्छालाभसंतुष्टः द्वन्द्वातीतः	संयोगवश {जो मिले, न मिले,ऐसी} प्राप्ति से संतुष्ट रहने वाला, {सुख-दुःखादि } द्वन्द्वों से परे,
विमत्सरः च सिद्धौ असिद्धौ समः	ईर्ष्याहीन और {पूर्वकृत अपने ही किए कर्मों की} सफलता-असफलता में समानता
कृत्वा अपि न निबध्यते	करके भी {आत्मस्थ हुआ, शिवबाबा की याद में रहने से कर्म-} बँधन में नहीं पड़ता।

गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः। यज्ञाय आचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते।।4/23

गतसंगस्य मुक्तस्य ज्ञान-	{दैहिक} आसक्ति-रहित, {एक सिवा सभी से} बन्धनमुक्त, {शिव की सच्चीगीता एडवांस} ज्ञान में
अवस्थितचेतसः यज्ञाय	{अडोल} दृढ़ बुद्धि वाले {और तन-मन-धन-समय-संबंध की शक्तियों द्वारा} यज्ञ-सेवाभाव से
आचरतः समग्रं कर्म प्रविलीयते	{अटूट} चलने वाले के सारे {भूत-वर्तमान के अच्छे-बुरे} कर्म पूर्णतया नष्ट हो जाते हैं।

[24-32 फलसहित पृथक्-पृथक् यज्ञों का कथन]

ब्रह्म अर्पणं ब्रह्म हविः ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतं। ब्रह्म एव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना।। 4/24

अर्पणं ब्रह्म ब्रह्मणा	{यज्ञसेवा में तन-धनादि सब-कुछ} अर्पित हुआ ब्रह्म है। {चतुर्मुखी} ब्रह्मा द्वारा {पंचम ऊर्ध्वमुखी}
ब्रह्माग्नौ हुतं हविः	{पंचानन} परब्रह्म• की योगाग्नि {वा ज्ञानाग्नि} में अर्पित हवि, {जो भाव से अर्पित हुई वस्तुएँ हैं,}
ब्रह्म ब्रह्मकर्मसमाधिना	{परं} ब्रह्म हैं। ब्रह्म {तत्वाग्नि} में {मनसा, वाचा या} कर्मणा {रुद्रज्ञान की यज्ञसेवा} से समाधिस्थ,

तेन ब्रह्म एव गन्तव्यं	उस {महत ब्रह्म-ज्ञान} से {भरपूर, इसी सृष्टि में सम्पन्न गीता-8/20 का} ब्रह्मलोक ही गंतव्य है।

•{मूर्तिमान् रूहानी शंकर के बीजरूप पंचतत्वों की देह का मुखमंडलीय अणु-2, योगबल की अखूट ऊर्जा से सोमनाथ मंदिर का लाल-2 लिंग-रूप आग का गोला जैसा बन जाता है, जिस 'यहोवा' को यहूदी लोग भी पूजते थे। बीच में हीरा, सुप्रीम बाप सदाशिव-ज्योति के योगबल से समान बनी हीरो समान शास्त्र-वर्णित श्वेत अर्जुन की आत्मा जगत्पिता/आदम की यादगार है। इन्हें ही शास्त्रों में 'हिरण्यगर्भ' कहा है।}

दैवं एव अपरे यज्ञं योगिनः पर्युपासते। ब्रह्माग्नौ अपरे यज्ञं यज्ञेन एव उपजुह्वति।।4/25

अपरे योगिनः दैवं यज्ञं एव	दूसरे योगीजन {चौमुखी ब्रह्मा के कुमारकादि भोगी} देवों की यज्ञ-सेवा से ही {पृथक-2 रीति}
पर्युपासते अपरे यज्ञेन यज्ञं एव	उपासना करते हैं, {जबकि} अन्य {ज्ञान-} यज्ञसेवा से {अश्वमेध रूद्र} यज्ञ को ही
ब्रह्माग्नौ उपजुह्वति	परब्रह्म-योगाग्नि में होम करते हैं। {फिर भी एक अव्यक्तमूर्ति की स्मृतियुक्त उपासना ही सहज है।}

श्रोत्रादीनि इन्द्रियाणि अन्ये संयमाग्निषु जुह्वति। शब्दादीन् विषयान् अन्ये इन्द्रियाग्निषु जुह्वति।।4/26

अन्ये श्रोत्रादीनि इन्द्रियाणि संयमाग्निषु	अन्य {ब्राह्मण} कर्ण-{चक्षु} आदि {एकादश} इन्द्रियों की संयम रूपी अग्नि में
जुह्वति अन्ये शब्दादीन् विषयान्	आहुति देते हैं, {जबकि} अन्य {गृहस्थी} शब्द-{स्पर्श} आदि विषय-भोगों को
इन्द्रियाग्निषु जुह्वति	{कर्ण-त्वचादि पाँच ज्ञान} इन्द्रियों की आग में {साक्षात् ईश्वरीय याद द्वारा ही} आहुति देते हैं।

सर्वाणि इन्द्रियकर्माणि प्राणकर्माणि च अपरे। आत्मसंयमयोगाग्नौ जुह्वति ज्ञानदीपिते।। 4/27

अपरे सर्वाणि इन्द्रियकर्माणि च प्राणकर्माणि	दूसरे सभी इन्द्रिय-कर्मों & {अपान-उदान आदि पञ्च} प्राण-कर्मों को
ज्ञानदीपिते आत्मसंयम योगाग्नौ जुह्वति	ज्ञानाग्नि से प्रदीप्त आत्म-संयम की योगाग्नि में {जीवनपर्यंत} आहुति देते हैं।

द्रव्ययज्ञाः तपोयज्ञाः योगयज्ञाः तथा अपरे। स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च यतयः संशितव्रताः।।4/28

द्रव्ययज्ञाः च तपोयज्ञाः	{इसी प्रकार विनाशी} पदार्थों की सेवाएँ और {भ्रूमध्य में ज्योतिबिंदु आत्मा की स्मृति का} तपयज्ञ, {या}
योगयज्ञाः तथा अपरे स्वाध्याय	{अनेकशः} योग यज्ञों तथा दूसरे आत्मा के {अनेक जन्मों के काल्पनिक} अध्ययन के
ज्ञानयज्ञाः यतयः संशितव्रताः	ज्ञानयज्ञ-सेवी; {व्यास मुनि जैसे नं. वार मननशील तपस्वी} योगीजन तीक्ष्णव्रत वाले हैं।

अपाने जुह्वति प्राणं प्राणे अपानं तथा अपरे। प्राणापानगती रुद्ध्वा प्राणायामपरायणाः।। 4/29

अपरे अपाने प्राणं तथा	अन्य {भक्त योगी प्राणवायु को परमात्मस्मृति समझ जड़त्वमयी} अपान वायु में प्राणवायु की तथा
प्राणे• अपानं जुह्वति	{जड़} प्राणवायु में अपान वायु की {क्षुद्र योगाग्नि-कुंड में} आहुति देते हैं, {जबकि अन्य भक्तयोगी}
प्राणापानगती रुद्ध्वा	{इन्हीं} प्राण•-अपान दोनों की गति को रोककर {अर्थात् अल्पकालीन निल संकल्प होकर}
प्राणायामपरायणाः	{निल बुद्धि रूपी कुम्भ के दिखावटी कुम्भक रूप} प्राणायाम के {अल्प} आश्रय में रहते हैं।

•यथार्थ में तो यहाँ प्राणवायु रूपी शुद्ध संकल्प और अपानवायु रूपी अशुद्ध संकल्पों की बात है। अर्थात् दैहिक वायु तत्व को रोकने-छोड़ने के शारीरिक हठयोग की बात नहीं है। ऐसे प्राणायाम & दैहिक आसन तो देहभान ही बढ़ाएँगे।

अपरे नियताहाराः प्राणान् प्राणेषु जुह्वति। सर्वे अपि एते यज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मषाः।। 4/30

अपरे नियताहाराः प्राणान्	अन्य {न खाने-पीने आदि के उपवासों में} नियमित आहार वाले {हठयोग पूर्वक} प्राणों को
प्राणेषु जुह्वति यज्ञक्षपित-	{मनमत या मानवमत पर} प्राणवायु में हवन करते हैं। {स्वाहा-2 वाले तन-} तापितयज्ञ से क्षीण
कल्मषाः सर्वेऽप्येते यज्ञविदो	हुए पाप वाले ← ये सब {भिन्न-2 प्रकार के हठयोगी यज्ञकर्ता} भी {नं.वार} यज्ञ के ज्ञाता हैं।

यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनं। न अयं लोकः अस्ति अयज्ञस्य कुतः अन्यः कुरुसत्तम।।4/31

यज्ञशिष्टामृतभुजो सनातनं	{ईश्वरीय सेवा में आहुति के बाद} यज्ञ से बचे अमृततुल्य {भोग} को भोगने वाले अनादि
ब्रह्म यान्ति कुरुसत्तम	{पंचमुखी परम} ब्रह्म को जाते हैं; {भ्रष्टकर्मी-कर्मघमंडी} कुरुओं में हे {धर्मानुकूल} उत्तम अर्जुन!
अयज्ञस्य अयं लोकः	यज्ञसेवाविहीन {स्वार्थी नास्तिकों} का {सम्पूर्ण विनाश चिन्तन वाला} यह संसार {भी सुखदायी}
न अस्ति अन्यः कुतः	नहीं है, {फिर} दूसरा {अतीन्द्रिय सुख का स्वर्गीय वैकुण्ठ सुखदाई} कैसे होगा?

एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे। कर्मजान् विद्धि तान् सर्वान् एवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे।।4/32

एवं ब्रह्मणो मुखे बहुविधा यज्ञा	इस प्रकार {संगठित चतुर्मुखी} ब्रह्मामुख से भाँति-2 के {मेले-सम्मेलनादि} यज्ञों का
वितता तान्सर्वान्कर्मजान्विद्धि	विस्तार हुआ है। उन सब {यज्ञों} को {कुरुवंशियों की कर्मेंद्रियों के} कर्म {घमण्ड} से उत्पन्न जान।
एवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे	ऐसा जानकर {तू कुरुवंशियों की भ्रष्ट कर्मेन्द्रियों से (सीखे) हिंसक कर्मों से भी} मुक्त हो जाएगा।

[33-42 ज्ञान की महिमा]

श्रेयान् द्रव्यमयात् यज्ञात् ज्ञानयज्ञः परन्तप। सर्वं कर्म अखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते।। 4/33

परंतप द्रव्यमयात् यज्ञात्	हे शत्रुपीड़क! {नाशवान} भौतिक पदार्थों से किए गए {भौतिक अग्नि द्वारा चालित} यज्ञ से
ज्ञानयज्ञः श्रेयान्	{अश्वमेध• रुद्र} ज्ञान-यज्ञ अधिक अच्छा है, {जो शतवर्षीय ज्ञान-योगाग्नि से निरंतर चलता है}
पार्थ अखिलं सर्वं	हे पृथ्वीश्वर! अखिल {विश्व-धर्मों के} सारे {वाममर्गी/भक्तिमार्गीय- अंधश्रद्धायुक्त धर्मों से उत्पन्न}
कर्म ज्ञाने परिसमाप्यते	कर्मकाण्ड {श्रद्धाभावनायुक्त एक लिंग भगवान के रुद्र} ज्ञान-{यज्ञ} में समाप्त हो जाते हैं।

•{①'राजस्व:'-स्व अर्थात् आत्मा का सच्चा स्वराज्य प्रदातायज्ञ। ②'अश्वमेध:'-मनरूपी अश्व मारा जाता है। ③'अविनाशी:'-भौतिक यज्ञ तो भौतिक पदार्थों से नाशवान हैं; परंतु इसमें मन-बुद्धि वाली अविनाशी आत्मा की ही प्रधानता है।④'रुद्र-ज्ञान-यज्ञ'=साक्षात् महारुद्ररूप ज्योतिर्लिंग की ज्ञान+योगाग्नि से कलियुगान्त में कल्पान्तकारी महाविनाश की अन्तिम आहुति डाली जाती है। जिसकी यादगार अभी की है- शंकर महादेव की अंतिम आहुति।}

तत् विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया। उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनः तत्त्वदर्शिनः।। 4/34

प्रणिपातेन सेवया परिप्रश्नेन	परमादरपूर्वक, {ज्ञान की} सेवा द्वारा, {व्यक्तिगत साप्ताहिक •कोर्स में} प्रश्नोत्तरपूर्वक
तत् विद्धि तत्त्वदर्शिनः	उस {रुद्रज्ञानयज्ञ} को {तू} जान ले। {एडवांस सच्चीगीता के} तत्त्वदर्शी {श्रेष्ठ ब्रह्मावत्स}
ज्ञानिनः ते ज्ञानं उपदेक्ष्यन्ति	/ज्ञानीजन• तुझे {साक्षात् ब्रह्मामुखनिसृत वेदवाक्यों के कपिलसांख्य}-ज्ञान का उपदेश करेंगे।

•आध्यात्मिक विश्वविद्यालय, कम्पिला-फर्रुखाबाद (उ.प्र.) भारत; Email- a11spiritual1@gmail.com;
website-www.pbks.info/www.adhyatmik-vidyalaya.com; Utube-AIVV/ADHYATMIK VIDYALAYA

यत् ज्ञात्वा न पुनः मोहं एवं यास्यसि पांडव। येन भूतानि अशेषेण द्रक्ष्यसि आत्मनि अथो मयि।। 4/35

पाण्डव यत् ज्ञात्वा पुनः	हे पण्डा रूप पाण्डु के पुत्र! जिस {पांडवपति/जगत्पिता} को जानकर फिर से {इस संसार में}
एवं मोहं न यास्यसि अथो	ऐसे {अल्पकालीन संबंधियों के दैहिक} मोह को {तू 21 जन्म में} नहीं पाएगा, फिर तो
येन आत्मनि अशेषेण भूतानि	जिस {जगत्पिता} की {देहरूप लिंगसहित हीरा-जैसी} आत्मा में समस्त प्राणियों को
मयि द्रक्ष्यसि	{बुद्धि नेत्र से} मुझ {बीजरूप अव्यक्तलिंग} में {समाए स्वर्गीय+नारकीय सृष्टिवृक्ष को साक्षात् & स्पष्ट} देखेगा।

अपि चेत् असि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः। सर्वं ज्ञानप्लवेन एव वृजिनं सन्तरिष्यसि।।4/36

चेत् सर्वेभ्यः पापेभ्यः अपि	चाहे सब पापियों से भी {महाधोखेबाज & महापापी अजामिल-जैसा नीच,क्षुद्र माना गया}

पापकृत्तमः असि	अधिक पापी {क्यों न} हो, {तो भी दया के भंडार शिवबाबा पुत्र महादेव/अर्जुन/आदम/यहोवा/अग्निदेव}
ज्ञानप्लवेन एव सर्वं	{स्वरूप} ज्ञानी {'शंकर-•चाप} जहाज' से निस्सन्देह सारे ही {63 जन्मों से आधाकल्प के द्वापुर-कलियुगी}
वृजिनं संतरिष्यसि	{नारकीय} पाप-समुद्र को {तू देहरूप जहाज में बैठा ज्ञान-योग बल से} तैरकर पूरा पार कर जाएगा।

•{'शंकरचाप जहाज, जेहि चढ़ि उतरहिं पार नर। बूढ़ि सकल संसार'} {'नानक नाम जहाज'} {'चन्द्रकांत वेदांत जहाज'} जगत्पिता की बच्चों जैसी लक्कड़बुद्धि लचीली देह को ऋषि-मुनियों ने शास्त्रों में जहाज/धनुष/चाप/नवैया बताया है।

यथा एधांसि समिद्धः अग्निः भस्मसात् कुरुते अर्जुन। ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते तथा।।4/37

अर्जुन समिद्धोऽग्निः यथैधांसि	हे अर्जुन! {द्वैतवादी युग से कामक्रोधादि विकारों की होली में} जलाई हुई अग्नि जिस रीति ईंधन को
भस्मसात् कुरुते तथा	जलाकर राख कर देती है, वैसे ही {अखूट ज्ञान-योगाग्नि के भंडारी सदाशिव ज्योति+यहोवा अग्निदेव}
ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते	{अर्थात् शिव+साकार बाबा की} ज्ञानाग्नि सब {प्रकार के पाप} कर्मों को भस्म कर देती है।

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रं इह विद्यते। तत् स्वयं योगसंसिद्धः कालेन आत्मनि विन्दति।। 4/38

इह ज्ञानेन सदृशं पवित्रं	इस {संसार} में {सच्चीगीता एडवांस} ज्ञान समान {परमोत्कृष्ट} पवित्र {तो कोई धर्मशास्त्रों में}
हि न विद्यते योगसंसिद्धः	कुछ भी नहीं है। {ईश्वरीय} याद से सम्पूर्ण सिद्ध रूप {हीरो पार्टधारी विश्वपिता/जगन्नाथ/विश्वनाथ/}
कालेन आत्मनि	{यहोवा/अग्निदेव/जगत्पिता आदम या अर्जुन के} पुरुषार्थ पूर्ण होते ही समय आने पर अपनी आत्मा में
स्वयं तत् विन्दति	•स्वयं उस संज्ञान {सांख्ययोग} को पाता है {जिससे 'भूतल देखहिं शैलवन भूतलभूरिनिधान।'} (रामायण)

•बाप को (निरंतर अव्यभिचारी रीति) याद करने से (सं.) ज्ञान आपे ही इमर्ज हो जाता है। (अ.वा.24.1.70 पृ.3 आदि)

श्रद्धावान् लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः। ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिं अचिरेण अधिगच्छति।।4/39

श्रद्धावान् तत्परः	{पूरा} श्रद्धावान् ,{ब्रह्मचर्य सहित ज्ञान-योग से इन्द्रियों को साधने में} सदा प्रयत्नशील {और आत्मस्मृति से}

संयतेन्द्रियः ज्ञानं लभते	संपूर्ण इन्द्रियदमनशील {ही} ज्ञान लेता है। {एकाग्र मनसा द्वारा दृढ़तापूर्वक इन्द्रियवशकर्ता}
ज्ञानं लब्ध्वा अचिरेण	ज्ञान पाकर शीघ्र ही {असम्भव को संभव करने वाले पुरुषोत्तम संगम के इसी संसार में रहते हुए}
परां शांतिं अधिगच्छति	{इसी जन्म में} परमधाम की शांति पाता है। {यानी परमब्रह्मलोक/परमाकाश यहीं उतार लेता है।}

अज्ञश्च अश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति। न अयं लोकः अस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः।।4/40

अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा	अज्ञानी & अश्रद्धालु तथा संशयालु {सहज राजयोग से जन्म-जन्मान्तर की राजाई या देवपद प्राप्ति से}
विनश्यति संशयात्मनः न अयं	नष्ट हो जाता है। संशयालु व्यक्ति को न यह {नारकीय, क्षणिक कागविष्ठा जैसे सुख का}
लोकः न परः अस्ति न सुखं	संसार है, न पार-{लोकीय स्वर्ग और} न {वैकुण्ठ का विष्णुलोकीय अतीन्द्रिय} सुख है।

योगसन्न्यस्तकर्माणं ज्ञानसञ्छिन्नसंशयं। आत्मवन्तं न कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय।।4/41

धनंजय आत्मवन्तं योगसंन्यस्तकर्माणं	हे ज्ञानजयी! {स्टार रुप} आत्मा में स्थिर याद से संपूर्ण कर्मबंधन का त्यागी,
ज्ञानसंछिन्नसंशयं कर्माणि न निबध्नन्ति	{एडवांस सच्ची गीता} ज्ञान से सारे संशयों के छेदक को कर्म {बिल्कुल} नहीं बाँधते;

तस्मात् अज्ञानसम्भूतं हृत्स्थं ज्ञानासिना आत्मनः। छित्त्वा एनं संशयं योगं आतिष्ठ उत्तिष्ठ भारत।। 4/42

तस्मात् भारत अज्ञानसम्भूतं एनं हृत्स्थं संशयं	इसलिए हे भारत! अज्ञान से उत्पन्न हुए इस हृदय में स्थित संशय को
आत्मनः ज्ञानासिना छित्त्वा योगमातिष्ठोत्तिष्ठ	आत्मा की ज्ञानकटारी से काटकर योग में जुट जा {और} उठ खड़ा हो।

अभ्यास प्रश्न-अध्याय 4

(I) **निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें-**

1) प्राचीन योग को राजर्षियों ने कब जाना ?

2) प्राचीन योग को संगमी शूटिग में किन-2 आत्माओं ने जाना?

3) श्रेष्ठतम त्रिकालदर्शिता का रहस्य क्या है?

4) मनुष्य पूर्वजन्म की बातों को क्यों भूल जाता है ?

5) निराकार शिवज्योति के जन्म की क्या विधि बताई?

6) जैन और वैदिक सृष्टि प्रक्रिया के अनुसार धर्म की सम्पूर्ण ग्लानि कब होती है?

7) पुनः इस नारकीय संसार मे कौन जन्म नहीं लेता ?

8) सद्गतिदाता सदाशिव ज्योति सुप्रीम बाप,टीचर को कौन प्राप्त कर पाता है?

9) मेरे शासकीय/राजाई भाव को किन लोगों ने और किस प्रकार प्राप्त किया है ?

10) शिव सुप्रीम सोल परमधामवासी है और शंकर साकारी दुनियॉ का वासी है -इस प्वांइट से संबंधित श्लोक का अर्थ बताइये।

11) स्वर्ग मे आधा कल्प तक कर्मों में कौन नहीं बंधता अथवा किस प्रकार का पुरूषार्थ करने से आत्मायें आधा कल्प (स्वर्ग के) कर्मों से नहीं बंधती ?

12) मनुष्यों में समझदार ब्रहमापुत्र किसको कहेंगे ?

13) पतित देह और पतित दुनियॉ मे रहते हुए भी जो सदा निष्पाप है-ऐसी आत्मा के पुरूषार्थ का लक्षण बताइये।

14) कर्मबंधन में न पड़ने वाली आत्मा के पुरूषार्थ के कौन-2 से लक्षण बताये?

15) किस प्रकार का पुरूषार्थ करने वाली आत्मा के अच्छे-बुरे कर्म पूर्णतया नष्ट हो जाते हैं?

16) सोमनाथ मंदिर का लाल-2 लिग किसकी यादगार है? किस प्रकार के पुरूषार्थ की यादगार है?

17) गृहस्थी परमब्रहम की योगाग्नि में किस प्रकार की आहुति देते हैं?

18) किस प्रकार के पुरूषार्थी योगीजन तीक्ष्णव्रत वाले है?

19) जो योगी अपानवायु में प्राण वायु की तथा प्राण वायु में अपानवायु की योगाग्निकुंड में आहुति देते हैं-उनसे भी श्रेष्ठ अन्य क्या क्रिया बताई है? बेहद अर्थ सहित बतायें?

20) अनादि परमब्रह्म को कौन जा पाते हैं?

21) किस प्रकार के पुरूषार्थी को यह संसार सुखदायी नहीं है ?

22) अनेक प्रकार के यज्ञों का विस्तार किसके द्वारा हुआ है ?

23) कुरूवंशियों के कर्मों से भी मुक्त होने का कौन-सा तरीका शिवबाबा ने अर्जुन को बताया?

24) भौतिक पदार्थों से किये गए यज्ञ से कौन-सा यज्ञ अधिक अच्छा है?

25) भौतिक पदार्थों से किये गए यज्ञ से ज्ञानयज्ञ क्यों श्रेष्ठ है ?

26) राजस्व अश्वमेध अविनाशी रूद्र ज्ञानयज्ञ का अर्थ बताइये?

27) इस ज्ञानयज्ञ को जानने के लिए गीता में क्या विधि बताई गई है?

28) जगतपिता को जानने के बाद आत्मा की क्या गति होती है?

29) 63 जन्मों से हुए आधा कल्प के पाप- समुद्र को किस प्रकार पार कर सकते हैं?

30) कौन-सी अग्नि सब प्रकार के पापों को भस्म कर देती है ?

31) यह ईश्वरीय ज्ञान कौन प्राप्त करता है और प्राप्त करने के बाद उसकी क्या गति होती है?

32) अश्रद्धालु तथा संशयालु आत्माओं का क्या परिणाम होता है ?

33) किस प्रकार की पुरूषार्थी आत्माओं को कर्म बिल्कुल नहीं बाँधते ?

34) संशय क्यों उत्पन होता है? कारण बतायें।

35) संशय को कैसे दूर किया जा सकता है ?

36) भगवान निराकार है और वो गर्भ से जन्म नहीं लेते हैं, किस श्लोक से सिद्ध करेंगे?

37) दुनिया का सबसे सुरक्षित शरीर रूपी जहाज कौन-सा है, जिस पर किसी भी प्राकृतिक आपदाओं का प्रभाव नहीं पड़ता। वह किस धातु का बना है और किन लोगों ने उसकी कॉपी करके उस जहाज को अपने नाम से बता दिया है।

38) पुरुषोत्तम संगमयुगी पंडित किसे कहते हैं?

39) गीता ज्ञान को किस प्रकार समझा जा सकता है?

40) यज्ञ कितने प्रकार के बताए हैं?

(II)-**निम्नलिखित श्लोक अर्थ बतायें**-

1) अभ्युत्थानं अधर्मस्य तदा आत्मानं सृजामि अहं॥
2) प्रकृति स्वां अधिष्ठाय सम्भवामि आत्ममायया॥
3) बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।
4) चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।

(III) **नामों की अर्थ सहित व्याख्या करें**

विवस्वत

मनु

इक्ष्वाकु

(IV)-**रिक्त स्थान भरें**-

1-न मुझे ..... फल में इच्छा है।

2-मनुष्यलोक में..... से उत्पन्न ..... शीघ्र होती है।

3-अज्ञान से उत्पन्न हुए इस हृदय में स्थित ..... आत्मा की ज्ञानकटारी से काटकर योग में जुट जा।

4-भौतिक पदार्थों से किए गए {भौतिक अग्नि द्वारा चालित} यज्ञ से ..... अधिक अच्छा है,

(V)अनेक शब्दों का उत्तर एक शब्द में दें-

1) यज्ञ से बचे अमृततुल्य {भोग} को भोगने वाले
2) प्राण•-अपान दोनों की गति - प्राणापानगती
3) संयोगवश {जो मिले, न मिले,ऐसी} प्राप्ति से संतुष्ट रहने वाला
4) {पु.संगम में हुए} गुण-कर्म के विभागानुसार

(VI) **सही/गलत का निशान लगायें-**

1) साधु-संतों से प्रश्न-उत्तर कर सकते हैं।
2) समः सिद्धौ असिद्धौ का अर्थ सुख-दुःखादि में समान है।
3) जैन धर्म और वैदिक सृष्टि प्रक्रिया के अनुसार, पापी कलियुग-अंत में ही धर्म की सम्पूर्ण ग्लानि होती है।

(VII)- **सम्पूर्ण ज्ञान बुद्धि में किस प्रकार बैठेगा, श्लोक से टेली करते हुए बेहद में समझाएँ।**

अथवा

अध्याय-4 का नाम और उसकी व्याख्या बेहद में टैली करके समझाएँ।